एक नई बांडुंग भावना के इंतज़ार में: सोलहवाँ न्यूज़लेटर (2025)

ट्राईकॉन्टिनेंटल : सामाजिक शोध संस्थान की ओर से अभिवादन।

मार्च महीने के अंतिम दिनों में मैं चीन के एक नए शहर शीओंग'न में था, जो बीजिंग से दो घंटे से भी कम की दूरी पर है।

यह शहर राजधानी बीजिंग की बढ़ती भीड़ को कम करने के लिए तो बसाया ही जा रहा है, साथ ही यहाँ वे लोग भी रहेंगे, जो चीन की नयी गुणवत्तापूर्ण उत्पादन शक्तियों को विकसित करने के लिए तत्पर हैं। यह शहर विश्वविद्यालयों, अस्पतालों, शोध संस्थानों और हाई-टेक खेती सहित नई खोज करने वाली टेक कंपनियों का केंद्र होगा। शीओंग'न का लक्ष्य है बिग डेटा का इस्तेमाल कर, सामाजिक विज्ञान की मदद से लोगों की रोज़मर्रा की ज़िंदगी को बेहतर बनाना और इसके साथ ही 'नेट-ज़ीरो' कार्बन उत्सर्जन हासिल करना।

यह शहर झीलों, नदियों और नहरों के एक बहुत बड़े जाल के बीच बसाया जा रहा है और इसके केंद्र में है **पाययांगतिएन झील**। एक सर्द दोपहर में ट्राईकॉन्टिनेंटल : सामाजिक शोध संस्थान की टीम के टिंग्स चाक, चिए शीओंग, जोजो हू, ग्रेस त्साओ, अतुल चंद्र और मैं एक नाव पर सवार होकर इस झील के पार बने जापानी साम्राज्यवाद के ख़िलाफ़ पहले युद्ध को समर्पित एक म्यूज़ियम देखने पहुँचे। पैदल चलकर म्यूज़ियम घूमने और वापस झील तक लौटने में जो एक घंटा हमने बिताया वो जादुई था। जब साम्राज्यवादी जापान ने हेबै प्रांत (जिसके केंद्र में बीजिंग था) पर क़ब्ज़ा किया तो पाययांगतिएन इलाक़े के किसानों और मछुआरों सहित यहाँ की ग्रामीण जनता का बहुत शोषण किया गया। इस क्षेत्र में चीन की कम्युनिस्ट पार्टी (सीपीसी) के प्रतिरोध का बदला लेने के लिए जापानी शक्तियों ने छोटे टापुओं और इस झील के किनारे बसे लोगों के साथ भारी हिंसा की। भूतपूर्व सैन्य अधिकारियों की मदद से सीपीसी ने चीचोंग जापान-विरोधी सैन्य अड्डे का निर्माण किया और उसके बाद यांलिंग में गुरिल्ला सैन्य दस्ता बनाया। हमारे लिए यह एक अद्भुत अनुभव रहा – झीलों के इस विशाल जाल में सैर करना, एक टापू से दूसरे टापू पर नाव से जाना और कल्पना करना कि कैसे उस दौर में किसानों और मछुआरों ने अपनी छोटी-छोटी नावों के सहारे जापानी सेना का मुक़ाबला किया होगा जो तेज़ रफ़्तार *Daihatsudōtei* (एक क़िस्म की बड़ी नाव) पर वहाँ पहुँचे थे!

बाएँ : यांलिंग गुरिल्ला दुश्मनों पर नज़र रखते हुए। दाएँ : पाययांगतिएन झील

पाययांगतिएन की महिलाएँ और पुरुष मुझे सातारा ज़िले (महाराष्ट्र) के बहादुर लोगों की याद दिलाते हैं, जिनकी तूफ़ान सेना ने 1942 और 1943 के बीच 'प्रति सरकार' (समानांतर सरकार) स्थापित करने के लिए ब्रिटिश शासन के हाथों से छह सौ गाँव छुड़ा लिए थे। वे भी किसानी पर निर्भर देहाती लोग ही थे, उनमें से कइयों के पास या तो देसी बंदूक़ें थीं या ब्रिटिशों से चुराई हुईं, इन्होंने अपनी गरिमा बचाए रखने के लिए अपनी जान तक का बलिदान दिया। पाययांगतिएन और सातारा से आगे बढ़कर हम केन्या के पहाड़ी इलाक़ों तक की बात कर सकते हैं जहाँ भूमि और स्वतंत्रता सेना (जिसे माउ माउ भी कहा जाता है) ने 1952 से 1960 के दौरान देदान किमाटी वाचीओरी के नेतृत्व में ब्रिटिश साम्राज्यवाद के ख़िलाफ़ विद्रोह खड़ा किया। अपनी मिट्टी से अटूट रूप से जुड़ी इन्हीं महिलाओं और पुरुषों ने साम्राज्यवाद-विरोधी भावना का

निर्माण किया जिसे बाद में कई और प्रक्रियाओं द्वारा विकसित किया गया : साम्राज्यवादी शासन से विभिन्न राष्ट्रों के स्वतंत्रता हासिल करने द्वारा (उदाहरण के लिए, 1947 में भारत, 1949 की चीनी क्रांति और 1963 में केन्या की आज़ादी); उपनिवेश-विरोधी अंतर्राष्ट्रीय सभाओं में शामिल होकर (इस तरह की सभाओं का सबसे बेहतरीन उदाहरण रहा 1955 में इंडोनेशिया के बांडुंग में हुआ एशियाई-अफ्रीकी देशों का सम्मेलन); और उनका यह आग्रह कि अंतर्राष्ट्रीय संगठनों को उपनिवेशवाद को ख़त्म करने के महत्व को पहचानना चाहिए (उदाहरण के लिए, **औपनिवेशिक देशों और लोगों को स्वतंत्रता प्रदान करने की 1960 की घोषणा** के माध्यम से, जिसमें कहा गया है कि 'मुक्ति की प्रक्रिया अप्रतिरोध्य और अपरिवर्तनीय है')[illegible]

40 के दशक के अंतिम सालों में विऔपनिवेशीकरण की शुरुआत और उससे दशकों पहले से चले आ रहे जन आंदोलनों के बीच के गहरे सम्बंध ने जिस भावना को जन्म दिया उसे ही बाद में बांडुंग भावना का नाम दिया गया। ये शब्द 1955 में इंडोनेशिया में हुई उस मीटिंग के लिए इस्तेमाल किए जाते हैं जिसमें अफ़्रीका और एशिया के उनत्तीस देशों की सरकारों के प्रतिनिधि एक साथ जुटे और थर्ड वर्ल्ड प्रोजेक्ट (तीसरी दुनिया) का निर्माण किया। इस प्रोजेक्ट ने कुछ ख़ास नीतियाँ पेश कीं जिनसे अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था में परिवर्तन लाया जा सके और एक नस्लवाद विरोधी और फ़ासीवाद विरोधी समाज का निर्माण किया जा सके। उस समय इस प्रोजेक्ट को बनाने वाले नेताओं और उनके देशों की जनता के बीच एक स्वाभाविक संबंध था। इस संबंध ने वह ऊर्जा पैदा की जो अफ़्रीका, एशिया और लैटिन अमेरिका में (1959 की क्यूबा क्रांति के बाद) बांडुंग भावना के विचार को एक अंतर्राष्ट्रीय अजेंडे की तरह आगे बढ़ा सकी।

अप्रैल 2025 में छपा हमारा नवीनतम डोसियर *[illegible]* (बांडुंग भावना) 1955 में हुए इस सम्मेलन की सत्तरहवीं वर्षगाँठ के मौक़े पर आया है और यह बांडुंग भावना के साथ स्वाभाविक संबंध बनाए रखने की ज़रूरत पर विचार करता है कि कैसे राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलनों से निकली सरकारों के नेता ख़ुद उपनिवेशवाद विरोधी जन विद्रोहों से उभरे थे और वे उस संवेदनशीलता तथा उस संगठनों के प्रति जवाबदेह थे। इसके साथ ही यह डोसियर सवाल उठाता है कि क्या यह भावना आज भी बरक़रार है। यह डोसियर उपनिवेशवाद के विरुद्ध हुए जन संघर्षों की भव्यता की भी बात करता है और उपनिवेशवादी दौर के बाद लूट और अभाव से बर्बाद हुए देशों में सरकारें बनाने के प्रयासों की भी।

इस सबके बावजूद 80 के दशक तक आते-आते बांडुंग भावना लगभग ग़ायब हो जाती है। यह उपनिवेशवाद विरोधी आंदोलनों के प्रति भूतपूर्व साम्राज्यवादी ताक़तों की हिंसा का शिकार हो जाती है (ऐसा युद्ध, प्रतिबंधों, जबरन तख़्तापलट आदि के द्वारा किया गया)। इसका एक दूसरा कारण यह भी था कि इन देशों पर पश्चिमी वित्तीय व्यवस्था द्वारा ऋण का संकट थोपा गया (यह पश्चिमी वित्तीय व्यवस्था ख़ुद उपनिवेशों को लूटकर बनायी गयी थी)। यह कहना ग़लत होगा कि बांडुंग भावना अब भी ज़िंदा है। यह मौजूद है, लेकिन मुख्य रूप से याद के रूप में न कि संघर्षरत जनता और सत्ता की दहलीज पर खड़े आंदोलनों के बीच जैविक संबंध के परिणाम के रूप में।

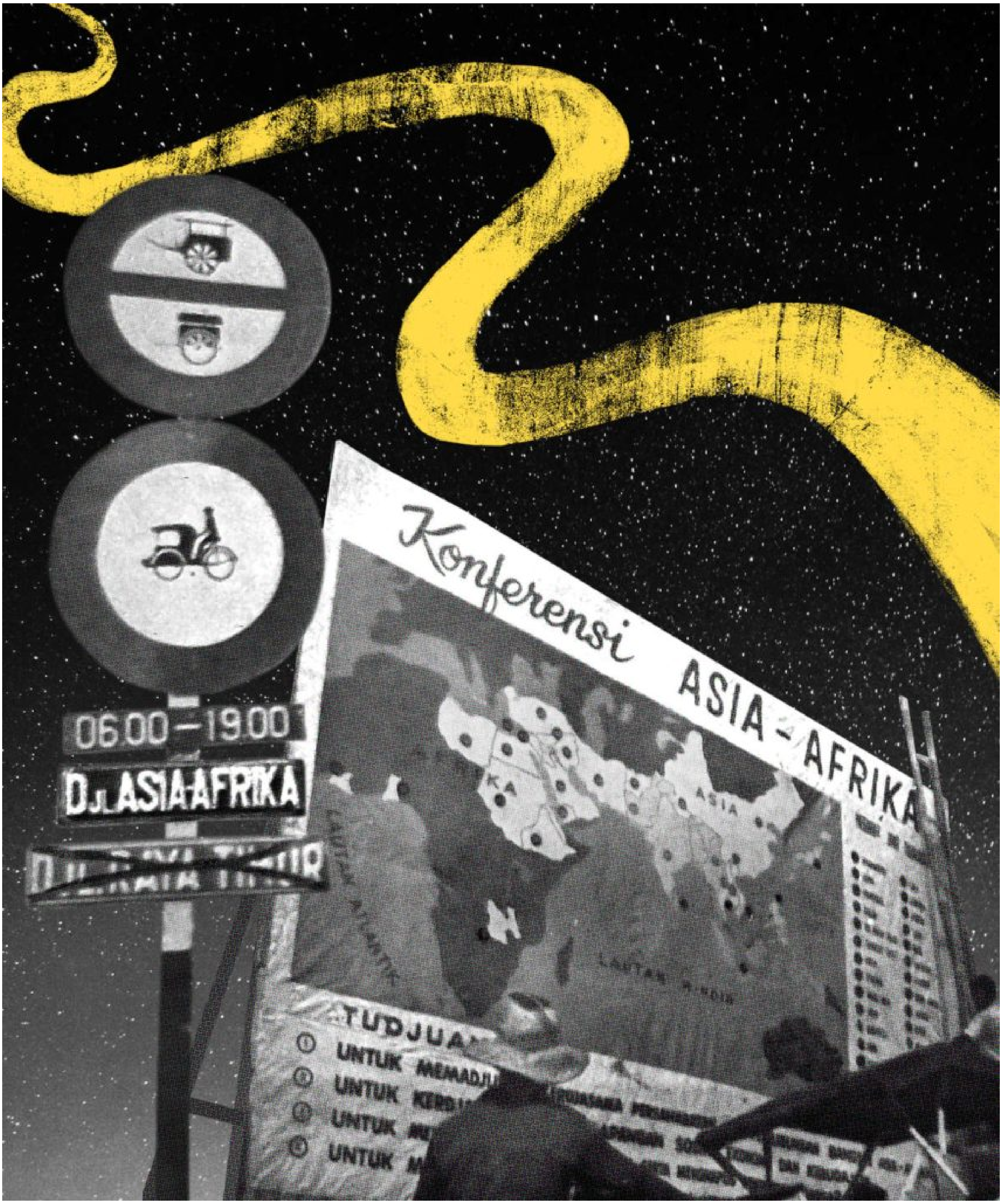

आज दशकों की जड़ता के बाद हम वैश्विक दक्षिण में एक 'नया भाव' उभरते हुए देख रहे हैं। लेकिन यह भाव बांडुंग भावना जैसा नहीं है। यह एक नई संभावना की ओर इशारा भर है, फिर भी इसमें काफ़ी लोकतांत्रिक संभावना है क्योंकि इसके केंद्र में 'संप्रभुता' की अवधारणा है। इस नए भाव के कुछ पहलू इस प्रकार हैं:

- एक व्यापक समझ बन गयी है कि अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के नेतृत्व में **ऋण** आयात करने और कच्चा माल निर्यात करने

की जो नीति चलती आयी है वह अब बरक़रार रखने लायक नहीं।

- अब यह स्पष्ट हो चुका है कि वॉशिंगटन या यूरोपियन यूनियन के आदेश मानना न सिर्फ़ राष्ट्रीय हितों के लिए हानिकारक है बल्कि पूरी तरह से उपनिवेशवादी भी है। वैश्विक दक्षिण के देशों में धीरे-धीरे आत्मविश्वास उत्पन्न हुआ और अब वे चुप रहने के लिए राज़ी नहीं और खुलकर तथा स्पष्टता से अपने विचार सामने रखना चाहते हैं।
- अब यह स्वीकार किया जाने लगा है कि चीन की औद्योगिक प्रगति और वैश्विक दक्षिण के अन्य देशों के विकास (ज़्यादातर एशिया स्थित) ने दुनिया में शक्तियों का संतुलन बदल दिया है। ख़ासतौर से वे देश जो पश्चिमी बॉन्ड होल्डरों और अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष पर निर्भर हो गए थे उनके लिए वित्तीय सहायता प्राप्त करने के विकल्प विकसित हो चुके हैं।
- इस आत्मविश्वास ने यह तो दिखा दिया है कि चीन दूसरे देशों की मदद कर सकता है लेकिन यह भी सच्चाई है कि वह अकेला वैश्विक दक्षिण को ??? नहीं सकता। चीन तथा वैश्विक दक्षिण के प्रगति कर रहे देशों की मदद के साथ-साथ वैश्विक दक्षिण के दूसरे देशों को अपनी योजनाएँ और संपदा तैयार करनी होगी।
- नवउदारवादी नीतियों के चलते दशकों से नज़रंदाज़ कर दी गयी केंद्रीय योजनाओं की महत्ता अब फिर उभरकर सामने आ रही है। योजना से जुड़े मंत्रालयों सहित राज्य के संस्थानों का जो ह्रास हुआ है उससे साफ़ ज़ाहिर हो गया है कि वैश्विक दक्षिण को खुद को तकनीकी तौर से सम्पन्न भी करना होगा और सार्वजनिक निकायों का भी निर्माण करना होगा। इस विनिर्माण के लिए क्षेत्रीय सहयोग भी अहम है।

बांडुंग सम्मेलन के दस साल बाद संयुक्त राज्य अमेरिका और ऑस्ट्रेलिया की भरपूर सहमति के साथ इंडोनेशिया की सेना ने सुकर्णो की सरकार गिरा दी। 1965 के सैन्य तख़्तापलट के दौरान सेना और उसके सहयोगियों ने इंडोनेशिया की कम्युनिस्ट पार्टी (पारताइ कोमुनीस इंडोनेशिया या पीकेआई) और अन्य मज़दूर तथा किसान संगठनों के लगभग दस लाख सदस्यों की **हत्या** कर दी। वामपंथ से सहानुभूति रखने वाले कई लोगों को गिरफ़्तार भी कर लिया गया। यह जबरन तख़्तापलट जितना पीकेआई के ख़िलाफ़ था उतना ही बांडुंग भावना के ख़िलाफ़ भी। पीकेआई के महासचिव सुदिसमन दिसंबर 1966 से अक्टूबर 1968 में उनकी हत्या कर दिए जाने तक जेल में बंदी रहे। इस दौरान उन्होंने न सिर्फ़ उन

समस्याओं पर विश्लेषणात्मक लेख लिखे जिनकी वजह से यह जबरन तख़्तापलट हुआ बल्कि भावुक कविताएँ भी लिखीं। ये कविताएँ बांडुंग भावना के लिए जनता की प्रतिबद्धता और संगठित होने की ज़रूरत पर लिखी गयीं थीं :

> क्राकाटोआ पर्वत से सटा समंदर
>
> समंदर से सटा क्राकाटोआ पर्वत
>
> गरजते चक्रवातों के बावजूद
>
> समंदर कभी सूखेगा नहीं
>
> बवंडरों की दहाड़ से
>
> क्राकाटोआ कभी झुकेगा नहीं
>
> समंदर है जनता
>
> क्राकाटोआ है पार्टी
>
> ये दोनों एकजुट रहेंगे हमेशा
>
> ये दोनों क़रीब रहेंगे हमेशा
>
> क्राकाटोआ पर्वत से सटा समंदर
>
> समंदर से सटा क्राकाटोआ पर्वत।

जकार्ता की सैन्य जेल के अंधेरों में क़ैद सुदिसमन जानते थे कि वे ख़ुद कभी आज़ाद नहीं हो पाएँगे, लेकिन फिर भी उन्होंने लिखा कि जनता साम्राज्यवाद और पूँजीवाद के अंतर्विरोधों को बर्दाश्त नहीं करेगी, लोग अंतत : अपने संगठन बनाएँगे। और ये संगठन एक नयी भावना को लेकर आगे बढ़ेंगे और हमारे वक़्त की वास्तविकताओं को पार करके बेहतर भविष्य की ओर बढ़ेंगे।

सस्नेह,

विजय